R.N.I. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2024-26

वर्ष-25 अङ्क-1 जनवरी 2025 1

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट (रजि.), अलीगढ़ (उ०प्र०) का
मासिक मुख समाचार पत्र

मङ्गलायतन

पंचकल्याणक विशेषांक

ऐतिहासिक, अद्भुत, अकल्पनीय

तीर्थधाम चिदायतन

पंचकल्याणक स्तुति

तुम देखे दरश सुख पाये नयना॥ टेक॥

(गर्भ)

तुम जग जाता, तुम जग माता, तुम वन्दन से भव-भय ना।
तुम गृह तीर्थंकर प्रभु आए, तुम देखे सोलह सुपना॥ 1॥

(जन्म)

तुम भव-त्यागी मन-वैरागी, सम्यग्दृष्टि शुचि वयना।
तुम सुत अनुपम ज्ञान विराजै, तीन ज्ञानधारी सुजना॥ 2॥

(दीक्षा)

तुम सुत राज्य करैं सुर-नर पै, नीति-निपुण दुःख उद्धरना।
तुम सुत साधु होय वन विहरे, तप साधत कर्मन हरना॥ 3॥

(ज्ञान)

तुम सुत केवलज्ञान प्रकाशे, जग मिथ्या तम सब हरना।
तुम सुत धर्म तत्त्व सब भाषे, भविक अनेक भव से तरना॥ 4॥

(मोक्ष)

कर्मबन्ध हर शिवपुर पहुँचे, फिर कबहुँ नहिं अवतरना।
हम सब आज जन्म फल मानो, गर्भोत्सव कर अघ दहना॥ 5॥

मङ्गलायतन

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट (रजि.), अलीगढ़ (उ.प्र.) का

मासिक मुखपत्र

वर्ष - 25, अङ्क - 1 (वी.नि.सं. 2551; वि.सं. 2081) जनवरी 2025

धन्य हुआ है जीवन हमारा...

धन्य हुआ है जीवन हमारा, पुण्य फला है देखो हमारा।
नगरी में आए जिनराज देखो, परिणति में आए भगवान देखो॥

सबसे पहले दर्शन को पाकर,
जागे हैं मेरे सौभाग्य देखो।
नगरी में आए जिनराज देखो॥
धन्य हुआ....

आनंद छटा मुखड़े पर झलके।
ज्ञान गुलाल से जीवन महके।
हे प्रभु तुमरे दर्शन से जाना,
मैं भी बनूं भगवान देखो॥
धन्य हुआ...

हे देवी! तुम धन्य बनी हो।
मुझसे पहले शिव पाओगी।
लाओ मुझे दो बाल तीर्थंकर,
जन्म कल्याण मनाएं प्रभु का॥
धन्य हुआ...

संस्थापक सम्पादक

स्व. पण्डित कैलाशचन्द्र जैन, अलीगढ़

स्व. श्री पवन जैन, अलीगढ़

सम्पादक

डॉ. जयन्तीलाल जैन, मङ्गलायतन वि०वि०

सह सम्पादक

डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, मङ्गलायतन

सम्पादक मण्डल

बाल ब्रह्मचारी हेमन्तभाई गाँधी, सोनगढ़

डॉ. राकेश जैन शास्त्री, नागपुर

श्रीमती बीना जैन, देहरादून

सम्पादकीय सलाहकार

श्री चिरंजीलाल जैन, भावनगर

श्री प्रवीणचन्द्र पी. वोरा, देवलाली

श्री वसन्तभाई एम. दोशी, मुम्बई

श्री श्रेयस् पी. राजा, नैरोबी

श्री विजेन वी. शाह, लन्दन

मार्गदर्शन

डॉ. किरीटभाई गोसलिया, अमेरिका

पण्डित अशोक लुहाड़िया, मङ्गलायतन

क्या - कहाँ

	पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव	5
	प्रतिष्ठा महोत्सव के लिए श्रावक को आज्ञा	6
द्रव्यानुयोग	मैं ही परमात्मा हूँ	8
	समयसार नाटक पर प्रवचन	19
	स्वानुभूतिदर्शन :	24
प्रथमानुयोग	हस्तिनापुर का अतिशयकारी इतिहास	26
करणानुयोग	पंचम काल की कुछ विशेषताएँ	28
प्रथमानुयोग	कविवर पं. जुगलकिशोरजी मुख्तार 'युगवीर'	31
द्रव्यानुयोग	जिस प्रकार-उसी प्रकार	32
	समाचार-दर्शन	33

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के प्रवचनांश

पञ्च कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव

देखो ! यह पञ्च कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव मनाया जा रहा है। सर्वज्ञ भगवान कैसे होते हैं और उन्होंने आत्मा का कैसा स्वरूप बताया है ? – यह जानकर अपने आत्मा को जानना ही सच्चा महोत्सव है और यही कल्याण का मार्ग है। **सुपात्र जीवों को देव-गुरु-धर्म की भक्ति -प्रभावना करने का तथा जिनमन्दिर बनाने आदि का शुभराग होता है परन्तु उनका प्रयोजन राग की पूर्ति करना मात्र नहीं है; उनका लक्ष्य तो अन्तर में वीतरागभाव के पोषण करने का होता है।**

इस जीव ने आत्मा के रागरहित स्वभाव का लक्ष्य किये बिना पञ्च कल्याणक महोत्सव करने आदि का शुभभाव पूर्व में अनेक बार किया है और उसमें धर्म मान लिया है परन्तु आत्मा के भान बिना इसका भव –भ्रमण नहीं मिटा। यहाँ तो आत्मा का अपूर्व भान प्रगट करके भव-भ्रमण कैसे मिटे ? – यह बात चल रही है।

पुण्य और पाप दोनों संयोगीभाव हैं, उनसे कर्म-बन्ध होता है। **जिस भाव से आत्मा को नया कर्म बँधे, वह भाव धर्म नहीं हो सकता और जो भाव, धर्मरूप होता है, वह कर्म-बन्धन का कारण नहीं हो सकता।** यदि धर्मभाव से भी आत्मा को बन्धन होता हो तो जैसे-जैसे धर्म बढ़ता जायेगा, वैसे-वैसे उसे बन्ध भी बढ़ता जायेगा तो फिर उसकी मुक्ति कैसे होगी ? इसलिए धर्म कभी बन्धन का कारण नहीं हो सकता। **शुभराग भी बन्ध का कारण है, उससे धर्म नहीं होता।**

यदि रागभाव धर्म का कारण हो तो जैसे-जैसे राग बढ़ेगा, वैसे-वैसे धर्म भी बढ़ता जायेगा; तब तो सम्पूर्ण धर्मात्मा केवली भगवान को बहुत राग होना चाहिए, परन्तु ऐसा कभी नहीं होता। जिस भाव से बन्धन होता है, उस भाव से धर्म नहीं होता। जिस भाव से तीर्थङ्कर नामकर्म का बन्धन होता है, वह भाव भी आत्मा के स्वभाव से विरुद्ध है, बन्धरूप है और खुले शब्दों

में कहें तो वह अधर्म है क्योंकि धर्मरूप भाव से कर्म का बन्ध नहीं होता।

प्रश्न : जिस भाव से तीर्थङ्कर नामकर्म बँधता है, उसमें कुछ अंश तो धर्म है या नहीं ?

उत्तर : नहीं, उसमें अंशमात्र भी धर्म नहीं है परन्तु उस जीव को आंशिक अधर्म अवश्य है। आंशिक अधर्म कहने का आशय यह है कि उस राग में धर्म का तो अंश भी नहीं है परन्तु **तीर्थङ्कर नामकर्म सम्यग्दृष्टि को ही बँधता है और जिस राग से बँधता है, उस राग के होते समय भी उस सम्यग्दृष्टि को आत्मा का यथार्थ ज्ञान और श्रद्धान है; अतः वह धर्मरूप है** और जितना राग है, उतना अधर्म है।

इस प्रकार **राग के समय भी ज्ञानी को सम्यग्दर्शन-ज्ञानरूप धर्म का अंश है - यह बताने के लिए सम्यग्दृष्टि के उस राग को आंशिक अधर्म कहा है।** राग के समय उन्हें मिथ्यात्वरूप अधर्म नहीं होता, इसलिए उन्हें आंशिक अधर्म कहा है। मिथ्यादृष्टि तो राग को ही अधर्म मानता है; इसलिए उसे आंशिक अधर्म नहीं, बल्कि पूरा अधर्म कहा है; जरा भी धर्म नहीं कहा।

(बीछिया : वीर नि. सं. 2475 फाल्गुन शुक्ला चतुर्थी, गर्भकल्याणक दिवस : श्री प्रवचनसार, गाथा 151)

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के प्रवचनांश

प्रतिष्ठा महोत्सव के लिए श्रावक को आज्ञा

यह भगवान की प्रतिष्ठा का महोत्सव चल रहा है। **भगवान ने आत्मा का जैसा स्वरूप बताया है, वैसा जानना और मानना ही सच्चा महोत्सव है।**

वसुनन्दी प्रतिष्ठापाठ में जिनबिम्ब की प्रतिष्ठा करानेवाले श्रावक का वर्णन आता है। वह श्रावक श्रीगुरु के पास जाकर आज्ञा माँगता है कि **'हे स्वामी! मैं इस लक्ष्मी को कुलटा स्त्री के समान और अनित्य जानता हूँ; इसलिए अब इसके प्रति राग घटाकर इसका सदुपयोग करूँ -**

ऐसा कोई कार्य बताइये। मेरी भावना श्री अरहन्त भगवान के पञ्च कल्याणक करने की है।' तब श्रीगुरु कहते हैं कि **'हे भव्य! तू धन्य है, तू अपने कुल में सूर्य के समान है।'** – ऐसा कहकर वे जिनबिम्ब प्रतिष्ठा और पञ्च कल्याणक महोत्सव की आज्ञा देते हैं।

यह महोत्सव अनन्त भवों का नाश करनेवाला है। यहाँ मात्र बाह्य-क्रिया और शुभराग की बात नहीं है परन्तु अपने ज्ञाता-दृष्टा स्वभाव के भानपूर्वक उसमें लीन होने पर तृष्णा घटने से अनन्त अवतार का नाश हो जाता है – यह बात कही जा रही है। **परमार्थ से आत्मा के स्वभाव की अनन्त ज्ञानमय सम्पत्ति प्रगट करके राग का व्यय करना ही सच्चा महोत्सव है।** महोत्सव करानेवाला अपना राग घटाने के लिए अपनी सम्पत्ति का व्यय करता है। वास्तव में आत्मा लक्ष्मी का व्यय नहीं कर सकता, परन्तु राग घटाने का उपदेश देने के लिए व्यवहार से लक्ष्मी का व्यय करने की बात कही जाती है।

(बीछिया : वीर नि. सं. 2475, फाल्गुन शुक्ला पञ्चमी,
जन्मकल्याणक दिवस : श्री प्रवचनसार, गाथा 159-160)

षट्खण्डागम ग्रन्थ की वाचना अनवरत प्रवाहित
महाबंध अधिकार की प्रथम पुस्तक की वाचना

विद्वत् समागम – आदरणीया बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबेन, जयपुर

दोपहर	01.30 से 03.15 तक (प्रतिदिन)	**षट्खण्डागम (महाधवलाजी)**
रात्रि	07.30 से 08.30 बजे तक	भगवती आराधना ग्रन्थ का स्वाध्याय
	08.30 से 09.15 बजे तक	**समयसार ग्रन्थाधिराज के कलशों का व्याकरण के नियमानुसार शुद्ध उच्च्चारण सहित सामान्यार्थ**

नोट—इस कार्यक्रम में आप ZOOM ID-9121984198,

- Password - tm@4321 youtube channel - teerthdhammangalayatan

के माध्यम से भी शामिल हो सकते हैं।

द्रव्यानुयोग

मुनिराज योगीन्दुदेव द्वारा रचित श्री योगसार ग्रन्थ की 22-23वीं गाथा पर पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के प्रवचन का अंश

मैं ही परमात्मा हूँ

जो परमप्पा सो जि हउँ, जो हउँ सो परमप्पु।
इउ जाणेविणु जोइया, अण्णु म करहु वियप्पु॥22॥
जो परमात्मा सो हि मैं, जो मैं सो परमात्म।
ऐसा जानके योगीजन! तज विकल्प बहिरात्म॥

अन्वयार्थ - **(जोइया)** हे योगी! **(जे परमप्पा सो जि हउं)** जो परमात्मा है वही मैं हूँ **(जो हउं सो परमप्पु)** तथा जो मैं हूँ सो ही परमात्मा है **(इउ जाणेविणु)** ऐसा जानकर **(अण्णु वियप्प म करहु)** और कुछ भी विकल्प मत कर।

22। अब स्वयं ही आया, उस (21 गाथा में) जिन सो हि परमात्मा (कहकर) ऐसी जरा तुलना की थी। अब मैं ही परमात्मा हूँ, ऐसा अनुभव कर, मैं ही परमात्मा हूँ, वीतराग सर्वज्ञदेव की ध्वनि में, त्रिलोकनाथ परमात्मा सौ इन्द्रों की उपस्थिति में समवसरण में लाखों-करोड़ों देवों की हाजिरी में भगवान की वाणी में आया ऐसा फरमाते थे कि तू परमात्मा है ऐसा निर्णय कर! तू परमात्मा है ऐसा निर्णय कर, ओ...हो...हो...! भगवान! परन्तु आप परमात्मा हो, इतना तो निर्णय करने दो! - कि यह परमात्मा हम हैं - ऐसा निर्णय कब होगा? - कि तू परमात्मा है - ऐसा अनुभव होगा, तत्पश्चात् यह परमात्मा है, ऐसा व्यवहार तुझे निर्णित होगा। निश्चय का निर्णय हुए बिना व्यवहार का निर्णय नहीं होगा। आहा...हा...! देखो, बदली बात!

जो परमप्पा सो जि हउँ, जो हउँ सो परमप्पु।
इउ जाणेविणु जोइया, अण्णु म करहु वियप्पु॥22॥

आहा...हा...! देखो, यह! कहते हैं कि भाई! हे धर्मी जीव! **जो परमात्मा है वही मैं हूँ....** परमात्मा को विकल्प नहीं, परमात्मा बोलते नहीं,

परमात्मा बोलने में आते नहीं ऐसा ही मैं आत्मा परमात्मा हूँ - ऐसा अनुभव दृष्टि में ले। आहा...हा...! यहाँ तो विशेष कहते हैं कि **अण्णु म करहु वियप्पु** दूसरे जितने विकल्प करें - दूसरे को समझाने के, यह शास्त्र रचने के - इनसे तू बड़प्पन मानेगा तो यह वस्तु में नहीं है। समझ में आया? अब सब शास्त्र-वास्त्र चर्चा छोड़कर यह कर - ऐसा कहते हैं। कब तक तुझे शास्त्र की चर्चाएँ मथना है? इस शास्त्र में ऐसा कहा है और उस शास्त्र में यह कहा है और इस शास्त्र में यह कहा है, यह तो सब विकल्प के जाल हैं। आहा...हा...!

जो परमप्पा सो जि हउं मैं हूँ ऐसा। **सो जि हउं** यह परमात्मा, वही मैं हूँ। फिर उस परमात्मा जैसा जान - ऐसा नहीं। यहाँ तो कहते हैं परमात्मा ही मैं हूँ। पहले उनके साथ मिलान किया था। यहाँ तो परमात्मा पूर्णानन्दस्वरूप एक सेकेण्ड के असंख्य भाग में अनन्त गुण का पिण्ड प्रभु, पिण्ड भगवान, वही मैं हूँ - ऐसा अन्तर में निश्चय में अनुभव में ला और उसका अनुभव करना, वह तेरे लाभ में जाता है। बाकी जितने विकल्प करना और वाणी-फाणी यह सब, शास्त्र की चर्चाएँ और वाद-विवाद व शास्त्र चर्चा करना, यह सब लाभ में नहीं है - यहाँ तो ऐसा कहते हैं। हैं? समझ में आया?

उन्होंने कहा है - **व्यवहार की कल्पनाएँ छोड़कर केवल एक शुद्ध निश्चयनय से अपने आत्मा को पहचान.... शास्त्रों का ज्ञान संकेतमात्र है। शास्त्र के ज्ञान में ही जो अटका करेगा, उसे अपनी आत्मा का दर्शन नहीं होगा।** आहा...हा...!

मुमुक्षु - कल्पनाएँ कीं सब व्यवहार की।

उत्तर - कल्पना ही है न परन्तु व्यवहार की (तो कहे), नहीं, कल्पना नहीं। अब सुन न!

मुमुक्षु - उससे तो संवर-निर्जरा होती है साहब।

उत्तर - धूल होती है। भगवान चिदानन्द विराजता है और तू व्यवहार रंक से (लाभ मानता है)। परमेश्वर हुआ रंक, भिखारी परमेश्वर हुआ....

ए... परमेश्वर होता है या भिखारी परमेश्वर होता होगा ? व्यवहार का राग भिखारी है, रंक है, नाश होने योग्य है, वह परमेश्वर पद को प्राप्त करावे ? समझ में आया ? शास्त्र की चर्चाएँ और कल्पनाएँ, यह कल्पना परमेश्वर पद को प्राप्त करावे ? तैंतीस-तैंतीस सागर तक सर्वार्थसिद्धि के देव शास्त्र की कल्पना (-चर्चा) करते हैं। छोड़, यह कल्पना छूटकर स्थिर होने से केवलज्ञान है। आहा...हा... ! समझ में आया ?

यह तो वीरों का मार्ग है, भाई ! आहा...हा... ! ..... यह आचार्य का टुकड़ा पहले खूब लेते, यह सब तुमने लिखा था (संवत्) 1982 की साल में, पता है ? बढ़वान... वीरवाणी... वीरवाणी... आती थी न ? वीरवाणी ? (संवत्) 1982 के साल में चातुर्मास था। 1982 में यह सब टुकड़े लिखते.... भगवान फरमाते हैं कि अरे... आत्मा ! तेरा मार्ग तो अफरगामी का मार्ग, भाई ! जिस रस्ते चढ़ा, वहाँ से नहीं फिरे - ऐसा तेरा मार्ग है। आचार्य का टुकड़ा है। ..... मैं.... परन्तु महापुरुषार्थ से आचरण में आवे ऐसा तेरा मार्ग है। यह कोई रेंगी-फेंगी, नपुंसक, हिजड़ों का मार्ग नहीं है। जिस मार्ग में तू चढ़ा, वह अफरमार्ग है। निज अव्यक्तगामी-वापिस न फिरे ऐसा तेरा रास्ता है, केवलज्ञान लेकर ही रहेगा - ऐसा तेरा मार्ग है। एई... वीरवाणी में लिखते, फिर बाद में छपाते। (संवत्) 1982-83 में उस दिन ऐसा कहते, हाँ ! उस दिन परन्तु... सभा हो, यह क्या कहते हैं परन्तु ? आचारांग का टुकड़ा है। णमो लोए सव्वसाहूणं ऐसा टुकड़ा 25-50 ऐसे हैं। णमो लोए सव्वसाहूणं - भगवान कहते हैं, हे वीर ! दुनिया के मार्ग के साथ मेरे वीतरागमार्ग को मत मिलाना, प्ररूपणा मत करना। दुनिया क्या मानती है ? अमुक क्या मानते हैं ? बड़े पण्डित क्या मानते हैं ? अब छोड़ न, यह सब होली करते हैं। णमो लोए सव्वसाहूणं - हमारा वीतराग का मार्ग पूर्णानन्द के पन्थ में बहे हुए लोक के साथ इस मार्ग को नहीं मिलाते, लोक के साथ कहीं मेल खाये नहीं, बिल्कुल मेल नहीं खायेगा। लोग तो मूढ़ हैं। भाई ! बहुत लोग हों तो क्या हो गया ? समझ में आया ?

भगवान आत्मा मैं पूर्णानन्द का नाथ शुद्ध चैतन्य महा परमात्मा के

अन्तरस्वरूप से भरपूर, यह परमात्मा ही मैं हूँ। अरे! **जो हउं सो परमप्पु तथा जो मैं हूँ, वही परमात्मा है....** लो! **जो परमात्मा है, वही मैं हूँ तथा जो मैं हूँ, वही परमात्मा है....** अरस-परस ले लिया। मैं, वह परमात्मा और परमात्मा, वह मैं। यह इस स्वीकार किस पुरुषार्थ से आता है? मोहनभाई! आहा...हा...! भाईसाहब! हमें बीड़ी बिना नहीं चलता, तम्बाकू बिना नहीं चलता, एक जरा इज्जत थोड़ी ठीक न पड़े तो झटका खा जाये, उसे तुम परमात्मा कहते हो? अरे! छोड़ न, यह कब तेरे स्वरूप में था? भगवान सच्चिदानन्द प्रभु, पूर्णानन्द का नाथ परमेश्वर को पर्याय में विकल्प की आड़ में भगवान पड़ा है। पूरा परमेश्वर, तूने छुपा दिया है। विकल्प की आड़ में छुपा दिया है। निर्विकल्प नाथ भगवान, निर्विकल्प अभेद स्वरूप है, वह निर्विकल्प दशा से ही प्राप्त हो - ऐसा है। समझ में आया? आहा...हा...!

जो परमात्मा है वही मैं हूँ **इउ जाणेविणु ऐसा जानकर.... अण्णु वियप्प म करहु** - ऐसा करके (कहते हैं), दूसरा व्यवहार, शास्त्र के पठन का विकल्प, पंच महाव्रत के विकल्प, नवतत्त्व के भेद के विकल्प, महाव्रत के विकल्प, नव तत्त्व के भेद के विकल्प ये सब अब मत कर, मत कर; करने योग्य तो यह है।

मुमुक्षु - स्वयं महाव्रत करते हैं और महाव्रत के विकल्प छोड़ - ऐसा कहते हैं।

उत्तर - छोड़.. छोड़.. छोड़.. ऐसा कहते हैं। देखो, यह स्वयं कहते हैं।

मुमुक्षु - स्वयं कहते हैं?

उत्तर - यह क्या कहते हैं? छोड़। छोड़ने योग्य है, उसे छोड़; आदर करने योग्य है, वहाँ स्थिर हो, आहा...हा...! अपने अन्दर वस्तु ऐसी अनन्त आनन्द और अनन्त गुण से भरपूर पूरा तत्त्व, अकेला स्वयं परमात्मा का पिण्ड है। परमस्वरूप का पिण्ड भगवान आत्मा है, उसका आश्रय ले। यही मैं। विकल्प छोड़ दे। शास्त्र के पठन के विकल्प छोड़ दे, दूसरे को समझाऊँ तो मुझे लाभ होगा, यह तो उसकी मान्यता में होता ही नहीं परन्तु दूसरे को समझने का विकल्प भी मुझे लाभदायक नहीं है। आहा...हा...! ए...

रतनलालजी ! यह वीतरागमार्ग ! आहा...हा... ! लाखों लोग समझ जायें... आहा...हा... ! परन्तु तुझे क्या है ? तू कहाँ वहाँ विकल्प और वाणी में है ? जहाँ तू है, वहाँ विकल्प और वाणी नहीं है। वे तो परमात्मस्वरूप चिदानन्द अखण्ड ज्ञातादृष्टा है। वहाँ वह विकल्प नहीं, वाणी नहीं। अब तुझे वहाँ से लाभ लेना है ? समझ में आया ? विकल्प और वाणी है, वहाँ अजीवतत्त्व और बन्धतत्त्व है। बन्धतत्त्व में अबन्ध भगवान विराजता है ?

अबन्धस्वरूपी प्रभु मोक्षस्वरूपी आत्मा... वस्तु अर्थात् अबन्धस्वरूप। वस्तु अर्थात् मोक्षस्वरूप। वस्तु अर्थात् पूर्ण आनन्द की प्रगट... प्रगट शक्तिरूप पूरा तत्त्व - ऐसे परमात्मा, वह मैं और मैं, वह परमात्मा - ऐसा जानकर, हे आत्मा ! दूसरे विकल्प छोड़, भाई ! छोड़। आहा...हा... ! वह कहे, नहीं। अभी शुभ विकल्प करोगे तो क्षायिक समकित होगा। अरे... कुकर्म कर डाला तूने। तूने परमात्मा को लुटा डाला... समझ में आया ? बापू ! यह निगोद का फल तुझे कठोर पड़ेगा भाई ! यह दुनिया तो बेचारी अभी पकड़ेगी कि हाँ ! अपने को तो कितना (मिलता है) ! कैसा मार्ग कहता है ? आहा...हा... ! शुभ में तो धर्म होता है। धूल में भी थोड़ा (नहीं होता)। शुभ में भगवान पड़ा है ? आत्मा शुभ से पार है, ऐसे आत्मा का अन्दर श्रद्धा-ज्ञान किये बिना, इसके द्वारा मुझे मिलेगा, मूढ़ पामर हो जायेगा, निगोद में जायेगा, हीन होते... होते... होते... मैं आत्मा हूँ या नहीं ? - यह श्रद्धा उड़ जायेगी। आत्मा हूँ - ऐसा व्यवहार, अन्दर अंश में श्रद्धा है, वह उड़ जायेगी। आहा...हा... !

आड़ न दे, आड़ न दे, भगवान आत्मा को आड़ न दे। आड़ दिया तो तेरे ऊपर आड़ चढ़ जायेगी। आहा...हा... ! यह एक शब्द आता था, नहीं ? जो दूसरे को आड़ देता है, वह स्वयं को आड़ देता है - ऐसा शब्द है। उस दिन व्याख्या करते यह सब कथन तुम्हारी वीरवाणी में आये हैं, भाई ! साथ थे ? ऐसा। वहाँ थे तो सही परन्तु उस लिखने में साथ थे ? किसी समय।

जो कोई अपनी आत्मसत्ता - ऐसी परमात्म सत्ता को आड़ देता है कि मैं इतना नहीं, मैं रागवाला और अल्पज्ञ और नीचवाला... वे आड़ देनेवाले,

आत्मा में मैं नहीं ऐसा उसे एक बार आड़ देगा.... जगत में मैं आत्मा ही नहीं... मैं नहीं, मैं नहीं... कहाँ हूँ ? कहाँ हूँ ? समझ में आया ? अन्धा हो जायेगा, मैं आत्मा ही, परमात्मा ही हूँ, अल्पज्ञ और राग नहीं, मैं परमात्मा ही हूँ; इसके अतिरिक्त विकल्प को छोड़ दे। इन सब विकल्पों से कुछ लाभ होगा, किंचित् लाभ होगा (-यह छोड़ दे)। हैं ? तीर्थंकर कर्म बाँधे और तीर्थंकर कर्म बाँधे उसे अल्प काल में मुक्ति होती है, लो! श्रीमद् कहते हैं, एक जीव को भी यदि ठीक से समझावे तो तीर्थंकर कर्म बाँधता है... परन्तु बाँधता है न ? ऐसा कहते हैं। छूटा कहाँ इसमें ? अन्य विकल्प मत कर! यहाँ तो तीर्थंकर कर्म बाँधने का विकल्प भी छोड़ दे। समझ में आया ? भगवान आत्मा परमात्मस्वरूप है न, प्रभु! अरे...! तेरे खजाने में कमी कहाँ है कि तुझे दूसरे की शरण लेना पड़े। आहा...हा...!

मुमुक्षु - पंचम काल में भी ऐसा है ?

उत्तर - पंचम काल में क्या.... काल में क्या आत्मा ही नहीं है, काल में आत्मा नहीं है, आत्मा में काल नहीं है। यह दो भाई 'वीरवाणी' लिखते थे। समझ में आया ? यह सिद्धान्त चलता है न एकदम! आहा...हा...!

अण्णु म करहु वियप्पु भगवान! आहा...हा...! कौन कहते हैं ? सर्वज्ञ परमेश्वर कहते हैं। यहाँ मुनि कहते हैं। समझ में आया ? मुनिराज दिगम्बर सन्त योगीन्द्रदेव जंगलवासी, जिन्हें वस्त्र का एक धागा भी नहीं था.... जंगल में रहते थे। अकेले वस्त्र का धागा (नहीं था) - ऐसा नहीं। एक विकल्प की वृत्ति का तन्तु भी मुझमें नहीं - ऐसे वे थे। जिस भाव से महाव्रत का विकल्प उठे यह मेरे में नहीं - ऐसे ये थे। समझ में आया ? आहा...हा...! यह कहते हैं, **इउ जाणेविणु जोइआ** इस स्वरूप में एकाग्र करनेवाला जीव! इस एकाग्रता के अतिरिक्त विकल्प है, चाहे जैसा हो। पंच महाव्रत के हों, व्यवहार समिति, गुप्ति के हों, व्यवहार पर को समझाने के हों, शास्त्र पढ़ने के हों.... अब पढ़-पढ़कर तुझे कब तक पढ़ना है - ऐसा कहते हैं। ए... प्रवीणभाई! पढ़कर क्या पढ़ते रहना है ? कि वह (भगवान) पढ़ना है अन्दर ?

यहाँ तो कहते हैं कि वह पढ़े हुए ज्ञान से पकड़ में आवे ऐसा नहीं, ऐसा वह है। ए.... निहालभाई! अरे.... वह शास्त्र के जाने हुए ज्ञान से पकड़ में आवे ऐसा नहीं है। शास्त्र और शास्त्र की ओर का ज्ञान वह परावलम्बी ज्ञान है; छोड़ उसकी महिमा! उसके बिना आत्मा का पता नहीं लगता - ऐसा कहते हैं। आहा...हा...! यहाँ तो विकल्प की बात की, परन्तु वह विकल्प है। भेद है, पर तरफ का ज्ञान वह आत्मा के स्वभाव का ज्ञान नहीं है। समझ में आया? आहा...हा...! ऊँचे हो जाओ, नपुंसक हो तो नहीं होता, नपुंसक को उत्साह नहीं चढ़ता। समझ में आया?

माता देवकी, श्रीकृष्ण वहाँ रहे थे न? दूसरी जगह रहे थे? ग्वाले के यहाँ। जहाँ माता को देखकर प्रेम आया और माता के स्तन में से दूध आया, सहज ही दूध आया, ऐसा जन्म दिया है न इन्होंने! यह क्या? कहते हैं, ग्वाले के यहाँ जन्म दिया और यह मेरी माता लगती है, इसे यह दूध क्या आया? यह मेरी माता लगती है। ग्वाले के वहाँ तो मुझे रखा लगता है। वासुदेव थे न? महा विचक्षण बुद्धिवाले थे। देवकी को दूध क्यों आया? यह मेरी माता लगती है, मैं भी ऐसा देखूँ तो बल और शरीर की सब स्थिति ऐसी लगती है। जहाँ मैं ग्वालों में रहा था, उस जाति का मैं नहीं लगता, आहा...हा...! समझ में आया? आहा...हा...! ऐसी नजर करे, वहाँ रानी को कहे, रानी की दिखावट भी अलग प्रकार की, पुण्यशाली है न! देवकी तो पुण्यशाली है! आहा...! शक्ल-सूरत के गर्भ का मैं लगता हूँ। वह नहीं, वह नहीं, इसलिए इनके स्तन में दूध आया है। समझ में आया? आहा...हा...! इसी प्रकार आत्मा इस विकल्प की जाति का नहीं है। निर्विकल्प चैतन्य भगवान आत्मा निर्विकल्प दृष्टि से पकड़ में आये ऐसा है - ऐसा कहते हैं। समझ में आया?

अण्णु म करहु वियप्पु पंच महाव्रत के विकल्प भी छोड़ दे। भगवान तो ऐसा कहते हैं कि हमें सुनना छोड़ दे। यह प्रभु क्या कहते हैं परन्तु यह? ए...ई...! भगवान फरमाते हैं कि हमारे सन्मुख देखना छोड़ दे। हमारे सामने देखने से तेरा भगवान हाथ नहीं आयेगा। आहा...हा...! दिव्यध्वनि कहती है - भगवान त्रिलोकनाथ परमात्मा की वाणी में ऐसा आया, त्रिलोकनाथ

समवसरण में फरमाते थे, अरे... आत्मा! तू परमात्मा है, अन्तर की चीज में परमात्मा न हो तो पर्याय के काल में परमात्मा कहाँ से आयेगा? क्या बाहर से आवे ऐसा है? भगवान परमात्मा का स्वरूप ही तेरा है। गर्भ में रहा है बन्दर और जन्में बालक – ऐसा होता होगा? गर्भ में मनुष्य का बालक वह भी ऐसा हो, उसका इनलार्ज होकर बाहर आता है। समझ में आया? इसी प्रकार भगवान आत्मा एक सेकेण्ड के असंख्य भाग में पूर्ण परमात्मा का रूप ही आत्मा का है। आहा...हा...! यह अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त आनन्द, अनन्त वीर्य, अनन्त स्वच्छता, प्रभुता, वीतरागता, निर्ग्रन्थता – ऐसे समस्त गुणों से भरपूर भगवान परिपूर्ण प्रभु आत्मा तू है। तू तुझे देख और आत्मा जान व मान! भगवान कहते हैं कि मेरे सन्मुख देखना रहने दे... ताकना रहने दे कि मुझसे कुछ मिलेगा – ऐसा कहते हैं। आहा...हा...! समझ में आया यह? इस वीतराग की वाणी में यह होता है, पामर की वाणी में यह नहीं होता। भगवान कुछ लेना नहीं तुम्हारे? कुछ फल तो लो... यह उपदेश दे दिया, शास्त्र का फल न हो तो उसकी पर्याय में, मुझे क्या? मैं तो केवलज्ञानी हूँ। मुझे कुछ लेना नहीं या अधूरा पूरा करना नहीं, उसके कारण... साधकजीव को अधूरा पूरा करना हो तो कुछ विकल्प और पर को समझाने से नहीं होता। अधूरा पूरा (करना हो तो) पूर्ण परमात्मा को देखने में एकाकार होवे तो अधूरा पूरा हो जायेगा। समझ में आया? आहा...हा...!

यहाँ तो कहते हैं **शब्दों से समझ में नहीं आता।** ए...इ...! **मन और विचार में नहीं आता।** भगवान मन के विचारने में आता है वह? परमात्मा अखण्ड आनन्द का रसकन्द है। स्वयं अनाकुल शान्तरस का पिण्ड है, पिण्ड, पूरा पिण्ड पड़ा है, खोल दृष्टि में से, कहते हैं। आहा...हा...! ऐसा भगवान मन में, विचार में नहीं आता। शब्द तो क्रम –क्रम से बतलाते हैं, उसमें आत्मा कहाँ आया? कहते हैं। समस्त शास्त्रों की चर्चाओं को छोड़। गुणस्थान, मार्गणास्थान के विचार को बन्द कर। लो! ऐसा इन्होंने बहुत अधिक लम्बा लिखा है। समझ में आया? फल का दृष्टान्त आया है। ठीक है, कहो! यह दो गाथा हुई।

आत्मा असंख्यातप्रदेशी लोकप्रमाण है

सुद्ध-पएसहँ पूरियउ, लोयायास-पमाणु।
सो अप्पा अणुदिणु मुणहु, पावहु लहु णिव्वाणु॥23॥
शुद्ध प्रदेशी पूर्ण है, लोकाकाश प्रमाण।
सो आतम जानो सदा, लहो शीघ्र निर्वाण॥

अन्वयार्थ - (लोयायासपमाणु सुद्धपएसह पूरियउ) जो लोकाकाशप्रमाण असंख्यात शुद्ध प्रदेशों से पूर्ण है **(सो अप्पा)** यही यह अपना आत्मा है **(अणुदिणु मुणहु)** रात-दिन ऐसा ही मनन करो **(णिव्वाणु लहु पावहु)** व निर्वाण शीघ्र ही प्राप्त करो।

अब आयी तीसरी। अब भगवान का स्थल बतलाते हैं। किस स्थल में भगवान विराजमान हैं? यह भगवान आत्मा किस स्थल में (रहता है)? उसका क्षेत्र कहाँ? उसका घर कहाँ है? इस भगवान का? आहा...हा...! **आत्मा असंख्यातप्रदेशी लोकप्रमाण है।** भगवान आत्मा....! यह (शरीर) तो मिट्टी का-धूल का रजकण है। वह कहीं आत्मा नहीं है। अन्दर राग-द्वेष के परिणाम होते हैं, वे कोई आत्मा नहीं है। कर्म के रजकण धूल-मिट्टी पड़ी है, वह कर्म जड़ है। वह आत्मा नहीं है। आत्मा अन्दर असंख्य प्रदेशी है.... एक प्रदेश उसे कहते हैं कि जिसका एक परमाणु / पॉइन्ट गज समान का माप करने से जिसकी चौड़ाई दिखे, उसे प्रदेश कहते हैं। ऐसा भगवान आत्मा असंख्य प्रदेशी स्थल में पड़ा है। ऐसे असंख्य प्रदेश में अनन्त गुण का धाम पड़ा है। क्षेत्र किसलिए बतलाते हैं? कोई ऐसा कहता है कि आत्मा लोकव्यापक है (परन्तु) ऐसा नहीं है। समझ में आया?

भगवान आत्मा.... ऐसा एकाग्र होना चाहता है, तब एकाग्र होता है या ऐसे एकाग्र होता है? हैं? बस! उसका क्षेत्र असंख्य प्रदेशी, इस देह प्रमाण, देह से भिन्न; देह प्रमाण, देह से भिन्न। देह प्रमाण भले हो, इससे कहीं देह का प्रमाण यहाँ आत्मा में आ गया? वह तो असंख्य प्रदेशी भगवान लोक प्रमाण है। लोक के जितने प्रदेश हैं, उतनी संख्या से प्रदेश में आत्मा विराजमान है। राग में कहीं वह विराजता नहीं है।

सुद्ध-पएसहँ पूरियउ, लोयायास-पमाणु।
सो अप्पा अणुदिणु मुणहु, पावहु लहु णिव्वाणु॥23॥

लहु... लहु... लहु... बहुत बार आता है। मोक्ष कर, मोक्ष कर। मोक्ष तो तेरा घर है आहा...हा...! संसार में कहाँ मर गया भटक-भटककर? चौरासी के अवतार में कचूमर निकल गया तो भी छोड़ने का तुझे हर्ष नहीं आता? आहा...हा...! घर तो आ, घर तो आ। इस पर घर में भटककर मर गया, कहते हैं। कहाँ घर रहा तेरा?

लोकाकाश प्रमाण असंख्यात शुद्ध प्रदेशी... देखो! अन्तर वस्तु असंख्य प्रदेश का दल है। प्रभु अरूपी भी दल है। रूप, वर्ण, गंध, रस, स्पर्शरहित असंख्य प्रदेशी चौड़ाई दलवाली चीज है। दल - पुष्टवाली चीज है। इस असंख्य प्रदेश में असंख्य प्रदेश शुद्ध रत्न समान निर्मल है। असंख्य प्रदेश शुद्ध रत्न समान निर्मल है। इनमें अनन्त-अनन्त गुण निर्मलरूप से उस क्षेत्र में विराजमान है। आहा....हा....! समझ में आया? क्या कहलाये....? एक पर्दे में महिला होती है न? भले ही ठिकाने बिना की (होवे परन्तु उसे) देखने का मन करता है। कहाँ रहती है? ए... उसमें रहती है, उस बंगले में... जरा सा सिर से पर्दा हटकर बाहर निकले तो कहे देखो यह निकले! हैं? ऊपर.... पर्दा जरा हट गया तो यह रानी साहब निकले.... ए... रानी साहब निकले। क्या है? हो तो भी सब समझने जैसा है। हैं? रानी साहब निकले, रानी साहब निकले... भावनगर दरबार की रानी पहली बार निकली, तब लोगों को लगा क्या निकले? पहली बार पर्दा छोड़ा है न? जब प्रथम पर्दा छोड़ा तब मोटर में निकले थे, वह गाँव उछल गया था। रानी साहब ने आज पर्दा छोड़ा, रानी साहब ने पर्दा छोड़ा.... उनकी चमड़ी को देखने निकला.... भगवान को देखने तो निकल एक बार! पर्दा छोड़ दे। राग की विकल्प की एकता का पर्दा छोड़ दे। भगवान पूर्णानन्द प्रभु अन्दर में विराजमान है। आहा...हा...! अरे... परन्तु उसे बात सुनना... क्या यह होगा? मैं ऐसा होऊँगा? इसे अतिरेक जैसा लगता है, अतिरेक जैसा लगता

है। जो वस्तु की स्थिति है.... उसे क्या अतिरेक कहलाता है ? अतिश्योक्ति (लगती है)। आहा...हा... !

कहते हैं यह तेरे असंख्य प्रदेश सत्ता प्रभु भगवान है। समझ में आया ? जो वस्तु होती है, उसे कोई भी आकार होता है। आत्मा वस्तु है या नहीं ? तो आकार होगा या नहीं ? वस्तु है या नहीं ? सत्ता है या नहीं ? सत्ता को आकार होता है या नहीं ? सत्ता को क्षेत्र होता है या नहीं ? ऐसा सिद्ध करते हैं। ए... प्रवीणभाई !

यह वस्तु है, देखो ! यह वस्तु है या नहीं ? तो इसकी सत्ता है या नहीं ? है न ? तो इसका क्षेत्र है न ? कितना ? कि इतना। जिसका अस्तित्व है, उसे क्षेत्र होता है या नहीं ? जिसका अस्तित्व है, उसे क्षेत्र होता है या नहीं ? वैसे ही आत्मा का अस्तित्व है तो उसका क्षेत्र है या नहीं ? असंख्य प्रदेश उसका स्थल-क्षेत्र है। एक-एक प्रदेश पूर्णानन्द, पूर्ण निर्मलानन्द से भरपूर है। जिसमें अनन्त आनन्द पके - ऐसा उसका असंख्य क्षेत्र है। इस असंख्य क्षेत्र का तेरा क्षेत्र ऐसा है कि इसमें अनन्त केवलज्ञान, अनन्त आनन्द पके वह क्षेत्र है। घास-फूंस पके ऐसा यह क्षेत्र नहीं है। आहा...हा... ! हल्का अनाज होता है, घास-फूंस सामान्य जमीन में होता है और ऊँचे चावल होते हैं न, ऊँची जमीन में होते हैं ! तो यह तो आत्मा ऊँची चीज... सिद्ध की पर्याय पके ऐसा आत्मा है। समझ में आया ? संसार पके वह आत्मा नहीं। आहा....हा... ! राग-द्वेष पके वह आत्मक्षेत्र नहीं। आहा...हा... !

यह शब्द लिया है न ? **सुद्ध** शुद्ध प्रदेश है भगवान आत्मा के असंख्य प्रदेश शुद्ध हैं। जिसमें अनन्त गुण विराजमान हैं। **लोयाया** लोक के - आकाश के प्रदेश प्रमाण उसका क्षेत्र है। **सो अप्पा अणुदिण मुणहु रात-दिन उसका ही मनन करो... अप्पा अणुदिणु** दिन-दिन, रात्रि। रात और दिन - ऐसा **मुणहु पावहु लहु** ऐसा असंख्य प्रदेशी भगवान अन्दर में विराजमान है, वहाँ नजर कर, वहाँ नजर कर, उस क्षेत्र में नजर कर ! **अणुदिण** उसका ध्यान कर, तो अल्प काल में केवलज्ञानरूपी निर्वाण पद प्राप्त होगा। इसके बिना दूसरे किसी प्रकार हो ऐसा नहीं है। ●

द्रव्यानुयोग

श्री समयसार नाटक पर पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के धारावाही प्रवचन

कर्त्ता कर्म क्रिया द्वार प्रवचन

भगवान आत्मा के अमृत स्वरूप में जाने पर उसको अनन्त-अनन्त अमृत का स्वाद आता है, उसमें उसकी सारी आकुलता का अभाव हो जाता है। गुण-गुणी के भेद का विचार भी छूट जाता है। अन्तर स्वरूप स्थिरता करने पर कोई दु:ख, आकुलता अथवा विकल्प आदि नहीं रहते हैं।

'ते जग में धरि आतमध्यान, अखंडित ज्ञान सुधारस चाखें'- देखो! इसमें किसी तीर्थ का ध्यान, देव-शास्त्र-गुरु का ध्यान अथवा पंचपरमेष्ठी का ध्यान करने को नहीं कहकर अपने आत्मा का ध्यान करने को कहा है। अपने गुण और गुणी का विचार भी छोड़ देना है। मैं शुद्ध हूँ और अबद्ध हूँ- ऐसा विकल्प भी राग है। यह विकल्प मेरा कार्य है और मैं इसका कर्त्ता हूँ-ऐसा राग है वहाँ तक आकुलता है। जो उसको छोड़कर आत्मा का ध्यान करता है वह अखंडित ज्ञानसुधा रस को चखता है- वह अमृत का प्याला पीता है, उसको अनादि से पिये जहर का प्याला पीना बंद हो जाता है।

अहो! जहाँ गुण-गुणी के भेद का विकल्प भी दु:खरूप है वहाँ अब अन्य कौनसा विकल्प सुखरूप होगा ?प्रभु! तेरा यह मार्ग ऐसा है। यह तो धीर-वीरों का मार्ग है, कायरों का मार्ग नहीं है।

(कहते हैं कि) अखंडित ज्ञानसुधा रस चखता है। आत्मा श्रीखण्ड का अथवा पुरी का स्वाद नहीं चखता है। श्रीखण्ड और रस पुरी आदि तो शरीर में जाते हैं, आत्मा को उनके स्वाद का ज्ञान होता है और राग भी है- इसकारण ऐसा लगता है कि मैं श्रीखण्ड आदि को खाता हूँ; परन्तु आत्मा जड़ को भोग नहीं सकता है। आत्मा तो मात्र राग को भोगता है। आत्मा श्रीखण्ड को नहीं भोग सकता है। आत्मा तो अपने अखण्ड ज्ञान के स्वाद को भोगता है तभी उसको आत्मा का अनुभव हुआ कहलाता है। अन्यथा दान करने से, चंदा

करा देने से अथवा ऐसी किसी भी शुभ क्रिया के कर देने से आत्मा को धर्म नहीं होता है।

यहाँ तो कहते हैं कि खण्ड ज्ञान का विचार करने में भी विकल्प की चिंगारिया उत्पन्न होती है। जो आत्मा का निर्विकल्प ध्यान करता है वही अखंडित ज्ञान के सुधारस को चखता है। ज्ञानामृत है वही सुधारस है। जड़ में कोई रस नहीं है। आम को अमृत कहने से वह कोई अमृत नहीं हो जाता। आम कितना ही महंगा हो, कितनी ही उच्च क्वालिटी का क्यों न हो; परन्तु वह जड़, मिट्टी-धूल है। जीव को उसका स्वाद नहीं आता है। उसको देखकर राग होता है उस राग का स्वाद जीव को आता है और तू मानता है कि मुझे आम का स्वाद आया, मुझे अनुकूलता का स्वाद आया-यह सब राग का स्वाद आत्मा चखता ही नहीं।

यहाँ तो कहते हैं कि अखण्ड ज्ञान में खण्ड का विचार करना भी तेरी वस्तु नहीं है। इसमें तो राग की होली जलती है ये उसकी चिंगारियां हैं। इसलिये परमेश्वर ऐसा कहते हैं कि 'मैं अखण्डज्ञान-स्वभावी हूँ' प्रथम ऐसा निर्णय तो कर! इसमें शान्ति है; अन्यत्र सब जगह अशान्ति हैं।

अब 25 वें श्लोक का (26वां पद) कहते हैं कि जीव निश्चय से अकर्त्ता और व्यवहार से कर्त्ता है।

जीव निश्चयनय से अकर्त्ता और व्यवहारनय से कर्त्ता है

विवहार-दृष्टिसौं विलोकत बंध्यौसौ दीसै,
निहचै निहारत न बांध्यौ यह किनिहीं।
एक पच्छ बंध्यौ एक पच्छसौं अबंध सदा,
दोउ पच्छ अपनैं अनादि धरे इनिहीं॥
कोऊ कहै समल विमलरूप कोऊ कहै,
चिदानंद तैसौई बखान्यौ जैसौ जिनिहीं।
बंध्यौ मानै खुल्यौ मानै दोऊ नैकौ भेद जानै,
सोई ग्यानवंत जीव तत्त्व पायौ तिनिहीं॥26॥

अर्थः- व्यवहारनय से देखो तो आत्मा बंधा हुआ दिखता है, निश्चय दृष्टि से देखो तो यह किसी से बंधा हुआ नहीं है। एक नय से बंधा हुआ और एक नय से सदा अबंध-खुला हुआ है, ऐसे ये अपने दोनों पक्ष अनादि काल से धारण किये हुए है। एक नय कर्मसहित और एक नय कर्मरहित कहता है, सो जिस नय से जैसा कहा है, वैसा है। जो बंधा हुआ तथा खुला हुआ दोनों ही बातों को मानता है, और दोनों का अभिप्राय समझता है, वही सम्यग्ज्ञानी जीव का स्वरूप जानता है॥26॥

काव्य - 26 पर प्रवचन

जैसे कमल को जल के सम्बन्ध से देखो तो वह पानी में डूबा हुआ दिखता है; परन्तु कमल के निर्लेप स्वभाव से देखो तो कमल पानी को छूता ही नहीं हैं। उसीप्रकार वर्तमान ज्ञान के लक्ष से कर्म सम्बन्ध से देखो तो आत्मा कर्म से बंधा हुआ दिखता है; परन्तु आत्मा को उसके स्वभाव से देखो तो, उस अबंध स्वभावी को कौन बाँध सकता है? वह तो मुक्त ही है। तुमने एक पेटी में डिब्बी में पांच लाख का रत्न रखा हो और वह तुम्हें चाहिए हो तो बंधन में है- ऐसा लगता है; परन्तु तुम्हारे ज्ञान में लेना होवे तो पेटी अथवा डिब्बी कोई आड़े आयेगी ?सीधे ज्ञान में ज्ञात होगा और रत्न को स्वयं की अपेक्षा से देखो तो वह भी बंधन से रहित है। रत्न है उसमें कोई बंधन आ नहीं गया है।

रत्न की भांति, व्यवहारनय से आत्मा शरीर, कर्म और राग से बँधा हुआ ज्ञात होता है, उसी समय निश्चयनय से देखो तो आत्मा तो इन सबसे मुक्त ही है। ज्ञानमूर्ति भगवान आत्मा सदा अबद्धस्पष्ट है। परन्तु जहाँ तक राग से ऐसा विचारता है-घोलन करता हैं कि 'मैं अबद्ध हूँ-यह भी निश्चयनय का एक पक्ष है-अनुभव नहीं। इसीलिये कहा है कि निश्चयनय के विकल्प तक आया तो भी उससे क्या ?मैं शुद्ध हूँ, अबद्ध हूँ, निर्मल हूँ- ऐसी विचार की भूमिका में-राग में आया तो भी उससे क्या ?कारण कि ऐसे विचारमात्र से वस्तु की श्रद्धा अथवा वस्तु की प्राप्ति नहीं हो जाती।

जिसने व्रत पालना, तप करना, ब्रह्मचर्य पालन करना, कंदमूल नहीं खाना, छह पर्वी में हरितकाय नहीं खाना इत्यादि में ही धर्म मान लिया है, उसको यह वीतराग की बात कहाँ से बैठे? मैं पर का त्याग करता हूँ और ग्रहण करता हूँ- ऐसी तेरी दृष्टि ही मिथ्या है। अबद्धस्वरूप आत्मा में पर का ग्रहण-त्याग है ही नहीं। जब मैं (कानजीस्वामी) सम्प्रदाय में था तब कहा था कि जिस भाव से तीर्थंकर नामकर्म बँधता है वह भाव धर्म नहीं है, पंचमहाव्रत पालन का भाव धर्म नहीं है, शुभराग है।

यह बात सुनकर अन्य साधु खुसुर-फुसुर करने लगे। अर्थात् छोड़ दो ऐसी बातें छोड़ दो- ऐसा कहकर उठकर चले गये; परन्तु सभा तो सुनने में लीन थी।

किसी बड़े सेठ को कोई व्यक्ति निर्धन कहे तो क्या वह निर्धन हो जाता है? क्या वह अपने को निर्धन मानने लगता है? सेठ तो कहता है तुम्हारे निर्धन कहने से मैं कोई निर्धन हो जाने वाला नहीं हूँ, मेरे आंगन में लिख जाओ तो भी मैं निर्धन हो जाने वाला नहीं हूँ। उसीप्रकार कोई इस अनाकुल आनन्द के नाथ आत्मा को गरीब समझकर रागवाला कहे, इससे वह रागी नहीं हो जाता। वह तो साक्षात् भगवान है। भगवान जैसी अनन्त पर्यायों को लेकर बैठा है।

अब कोई मैं बंधवाला हूँ, रागी हूँ-ऐसे विचार तो नहीं करे, परन्तु मैं अबद्ध हूँ- ऐसा विचार करे; तो भी वह विकल्प है और उसके पक्ष में वह (विचार करने वाला) खड़ा है। अभी उसको आत्मा का अनुभव नहीं है। भाई! यह तो चौरासी के अवतार का अभाव होकर मुक्त होने की बात है। यह कोई रंक (भिखारियों) का मार्ग नहीं है।

'कोई कहे समल-विमलरूप'- कोई कहता है कि आत्मा में-पर्याय में तो मेल भरा है और कोई कहता है आत्मा निर्मल है। भाई! त्रिलोकनाथ सर्वज्ञ परमेश्वरदेव ने जैसा कहा है वैसा आत्मा है। वस्तु स्वभाव से आत्मा

आनन्दकंद चिदानन्द है और पर्याय में राग है-इस कारण आत्मा को रागवाला भी कहा जाता है। अत: त्रिकाल शुद्धतत्व की अपेक्षा से मैं अबद्ध हूँ और निमित्त की अपेक्षा से पर्याय में बंध और रागादि है-ऐसा भेद है, उसको ठीक प्रकार से जानकर पश्चात् तत्सम्बन्धी विकल्प छोड़कर जो आत्मा का अनुभव करता है वह आत्मा को प्राप्त करता है।

आतम भावना भाते-भाते जीव केवल ज्ञान को प्राप्त करता है; परन्तु इस धुन को रटते-रटते केवलज्ञान नहीं होता है। भावना अर्थात् जिसमें मैं अबद्ध हूँ- ऐसा विकल्प भी खटकता है। जो इस विकल्प को तोड़कर निजस्वरूप का अनुभव करता है वह आत्मा को प्राप्त करता है और वह ज्ञानवंत जीव केवलज्ञान और मुक्ति को प्राप्त करता है। मात्र विकल्प किया करने वाला आत्मा को प्राप्त नहीं करता है।

नोट:- 26 से 44 तक के श्लोक विविध नयपक्षों के बारे में लिखे गये हैं जिनका पद्यानुवाद नाटक समयसार में अनुपलब्ध है।

क्रमश:

वैराग्य समाचार

रामगढ़ (शिवपुरी) : बालब्रह्मचारी पण्डित सुनीलजी शास्त्री का आकस्मिक देहपरिवर्तन हो गया है। आप प्रथमानुयोग को अध्यात्म के रस में पिरोकर तत्त्वज्ञान का रसास्वादन कराते थे।

सुसनेर (पिड़ावा) : पण्डित केशरीसिंहजी पाण्डे का आकस्मिक देहपरिवर्तन हो गया है। आप जीवनपर्यन्त गुरुदेवश्री के तत्त्वज्ञान से ओतप्रोत थे।

दोनों ही विद्वान जन-जन तक तत्त्वज्ञान पहुँचाने के लिए संलग्न थे। तीर्थधाम मङ्गलायतन परिवार दिवंगत आत्मा के सुगतिगमन, बोधिलाभ एवं शीघ्र मुक्ति प्राप्ति की भावना भाता है।

स्वानुभूतिदर्शन : बहिनश्री की तत्त्वचर्चा

प्रश्न :- बाहर की मिठास अभी छूटती नहीं है, तो आत्मा की प्राप्ति के लिये क्या करें ? कैसे आगे बढ़ें ?

समाधान :- आत्मा सबसे निराला कोई अपूर्व है—इस प्रकार आत्मा को पहिचाने तो भव का अन्त हो। गुरुदेव ने ज्ञायक को पहिचानने का मार्ग बतलाया है, उसे पहिचाने तो भव का अन्त हो। आत्मा की मिठास लगनी चाहिए। अन्तर से आत्मा की मिठास और उसकी जरूरत लगे तो पुरुषार्थ हो। आत्मा की मिठास लगती नहीं और बाहर की मिठास लगती है तो बाहर का मिलता है; और यदि आत्मा की मिठास लगे तो आत्मा मिलता है। आत्मा की मिठास नहीं लगती तो आत्मा कहाँ से मिले ? उसे अन्तर से आत्मा की अपूर्वता लगनी चाहिए। जैसे भगवान कोई निराले हैं, वैसे ही मेरा आत्मा भगवान समान है—इस प्रकार पहिचान करे तो आगे बढ़ सकता है।

प्रश्न :- श्रीमद् राजचन्द्रजी के वचनामृत में आता है कि—दूसरा कुछ मत खोज, एक सत्पुरुष को खोजकर उसके चरणकमल में सर्वभाव अर्पण करके प्रवृत्ति करता रहा, फिर यदि मोक्ष न मिले तो मुझसे लेना।—इसे विशेष स्पष्टता से समझाने की कृपा करें।

समाधान :- तत्त्व को जिसने ग्रहण किया है, स्वानुभूति जिसने प्रगट की है, मार्ग जिन्होंने प्रगट किया है और जो मार्ग को जानते हैं, ऐसे एक सत्पुरुष को खोज वे तुझे सब बतलायेंगे। तुझे अन्तर से कुछ समझ में नहीं आता तो सत्पुरुष को खोज और फिर वे सत्पुरुष जो कुछ कहें उसका आशय ग्रहण कर ले।

मोक्ष मुझसे लेना अर्थात् तुझे मोक्ष मिलना ही है; तूने सत्पुरुष को ग्रहण किया और पहिचाना तो तुझे मार्ग मिलना ही है, मोक्ष प्रगट होना ही है। इसलिए 'मोक्ष न मिले तो मुझसे लेना' उसका अर्थ है कि तुझे मोक्ष मिलनेवाला ही है।

अनन्त काल से सम्यग्दर्शन प्राप्त नहीं हुआ, उसे देव-शास्त्र या गुरु मिलें और अपना उपादान तैयार हो तो प्राप्त हो—ऐसा निमित्त-उपादान का सम्बन्ध है; अन्तर से देशनालब्धि प्रगट हुई हो तो अवश्य सम्यग्दर्शन प्राप्त हो। सम्यग्दर्शन होता है, अपने उपादान से, परन्तु निमित्त के साथ ऐसा सम्बन्ध होता है। इसलिए तू एक सत्पुरुष को खोज, उसमें तुझे सब कुछ मिल जायेगा। तुझे सत्पुरुष मिलें और मार्ग प्राप्त हुए बिना रहे ऐसा नहीं बनता, अवश्य मार्ग मिलता ही है; क्योंकि सत्पुरुष के प्रति तुझे भक्ति एवं अर्पणता आई है और तूने सत्पुरुष को पहिचाना है तो तुझे आत्मा पहिचानने में आये बिना रहेगा ही नहीं।

जो भगवान को पहिचाने वह अपने को पहिचाने और अपने को पहिचाने वह भगवान को पहिचाने। भगवान के द्रव्य-गुण-पर्याय को पहिचाने वह अपने द्रव्य-गुण-पर्याय को पहिचाने। तू सत्पुरुष को पहिचान तो तुझे आत्मा पहिचानने में आये बिना रहेगा ही नहीं। उससे तुझे अवश्य स्वानुभूति की प्राप्ति होगी और मोक्ष भी अवश्य मिलेगा ही। अनादिकाल से अपने लिये अनजान मार्ग है, इसलिए सम्यग्दर्शन की तैयारी हो और सर्व प्रथम सम्यग्दर्शन हो तब देव या गुरु का निमित्त अवश्य होता है, इसलिए तू सत्पुरुष को खोज ऐसा कहते हैं। तू सत्पुरुष को पहिचान तो तुझे आत्मा पहिचानने में आये बिना नहीं रहेगा—ऐसा उसका अर्थ है।

स्वयं ने सत्पुरुष को ग्रहण किया-पहिचाना कब कहने में आये ?—कि आत्मा की प्राप्ति हो तब, यदि आत्मप्राप्ति न हो तो उसने सत्पुरुष को पहिचाना ही नहीं—ग्रहण किया ही नहीं और उसका आशय ग्रहण किया ही नहीं।

प्रथमानुयोग

....गतांक से आगे

तीर्थधाम चिदायतन

हस्तिनापुर का अतिशयकारी इतिहास

धार्मिक नगरी हस्तिनापुर का वर्णन उत्तरपुराण से

इधर जिनका उग्र पराक्रम बढ़ रहा है ऐसे रेणुकी के दोनों पुत्रों ने इक्कीस बार क्षत्रिय वंश को निर्मूल नष्ट किया। पिता के मारे जाने से जिन्होंने वैर बाँध लिया है, ऐस उन दोनों भाईयों ने अपने हाथ से मारे हुए समस्त राजाओं के सिरों को एकत्र रखने की इच्छा से पत्थर के खंभों में संगृहित कर रखा था। इस तरह दोनों भाई मिलकर समस्त पृथिवी की राज्यलक्ष्मी का अच्छी तरह उपभोग करते थे। किसी एक दिन निमित्तकुशल नाम के निमित्तज्ञानी ने फरसा के स्वामी राजा इन्द्रराम से कहा कि आपका शत्रु उत्पन्न हो गया है, इसका प्रतिकार कीजिए। इसका विश्वास कैसे हो ? यदि आप यह जानना चाहते हैं तो मैं कहता हूँ। मारे हुए राजाओं के जो दाँत आपने इकट्ठे किये हैं, वे जिसके लिए भोजन रूप परिणत हो जावेंगे वही तुम्हारा शत्रु होगा। निमित्तज्ञानी का कहा हुआ सुनकर परशुराम ने उसका चित्त में विचार किया और उत्तम भोजन करानेवाली दानशाला खुलवाई। साथ में यह घोषणा करा दी कि जो भोजनाभिलाषी यहाँ आवें उन्हें पात्र में रखे हुए दाँत दिखलाकर भोजन कराया जावे। इस प्रकार शत्रु की परीक्षा के लिए वह प्रतिदिन अपने नियोगियों—नौकरों के द्वारा अनेक पुरुषों को भोजन कराने लगा। इधर सुभौम ने अपनी माता से अपने पिता के मरने का समाचार जान लिया, वास्तव में उसका चक्रवर्तीपना प्राप्त होने का समय आ चुका था, अतिशय निमित्तज्ञानी सुबन्धु मुनि के कहे अनुसार उसे अपने गुप्त रहने का भी सब समाचार विदित हो गया। अत: वह परिव्राजक का वेष रखकर अपने रहस्य को समझनेवाले राजपुत्रों के समूह के साथ अयोध्या नगर की ओर चल पड़ा सो ठीक ही है, क्योंकि कल्याणकारी दैव भाग्यशाली पुरुषों को समय पर प्रेरणा दे ही देता है। उस समय अयोध्या नगर में रहनेवाले देवता बड़े जोर से

रोने लगे, पृथिवी काँप उठी और दिन में तारे आदि दिखने लगे। सुभौम कुमार भोजन करने के लिए जब परशुराम की दानशाला में पहुँचे तो वहाँ के कर्मचारियों ने बुलाकर उन्हें उच्च आसन पर बैठाया और मारे हुए राजाओं के संचित दाँत दिखलाये परन्तु सुभौम के प्रभाव से सब दाँत शालि चावलों के भातरूपी हो गये। यह सब देखकर वहाँ के परिचारकों ने राजा के लिए इसकी सूचना दी। राजा ने भी 'उसे पकड़कर लाया जावे' यह कहकर मजबूत नौकरों को भेजा। अत्यन्त क्रूर प्रकृतिवाले भृत्यों ने सुभौम के पास जाकर कहा कि तुम्हें राजा ने बुलाया है अत: शीघ्र चलो। सुभौम ने उत्तर दिया कि मैं तुम लोगों के समान इससे नौकरी नहीं लेता फिर इसके पास क्यों जाऊँ? तुम लोग जाओ ऐसा कहकर उसने उनकी तर्जना की, उसके प्रभाव से वे सब नौकर भयरूपी ज्वर से ग्रस्त हो गये और सब यथास्थान चले गये। यह सुनकर परशुराम बहुत कुपित हुआ। वह युद्ध के सब साधन तैयार कर आ गया। उसे आया देख सुभौम भी उसके सामने गया। परशुराम ने उसके साथ युद्ध करने के लिए अपनी सेना को आज्ञा दी। परन्तु भरतक्षेत्र के अधिपति जिस व्यन्तरदेव ने जन्म से लेकर सुभौमकुमार की रक्षा की थी, उसने उस समय भी उसकी रक्षा की अत: परशुराम की सेना उसके सामने नहीं ठहर सकी। यह देखकर परशुराम ने सुभौम की ओर स्वयं अपना हाथी बढ़ाया परन्तु उसी समय सुभौम के भी एक गन्धराज-मदोन्मत्त हाथी प्रकट हो गया। यही नहीं, एक हजार देव जिसकी रक्षा करते हैं और जो चक्रवर्तीपना का साधन है, ऐसा देवोपनीत चक्ररत्न भी पास ही प्रकट हो गया सो ठीक ही है क्योंकि भाग्य के सन्मुख रहते हुए क्या नहीं होता? जिस प्रकार पूर्वाचल पर सूर्य आरूढ़ होता है, उसी प्रकार उस गजेन्द्र पर आरूढ़ होकर सुभौमकुमार निकला। वह हजार आरेवाले चक्ररत्न को हाथ में लेकर बहुत ही अधिक सुशोभित हो रहा था। उसे देखकर परशुराम बहुत ही कुपित हुआ और सुभौम को मारने के लिए सामने आया। सुभौम कुमार ने भी चक्र द्वारा उसे परलोक भेज दिया—मार डाला तथा बाकी बीच हुई सेना के लिए उसी समय अभय-घोषणा कर दी।

क्रमश:

करणानुयोग

पंचम काल की कुछ विशेषताएँ

भगवान ऋषभेदव ने भरत चक्रवर्ती को उनके 16 स्वप्नों का फल दर्शाते हुए यह भविष्यवाणी की थी—

23वें तीर्थंकर तक मिथ्यामतों का प्रचार अधिक न होगा। 24वें तीर्थंकर के काल में कुलिंगी उत्पन्न हो जायेंगे। साधु तपश्चरण का भार वहन न कर सकेंगे। मूल व उत्तर गुणों को भी साधु भंग कर देंगे। मनुष्य दुराचारी हो जायेंगे, नीच कुलीन राजा होंगे, प्रजा जैन मुनियों को छोड़कर अन्य साधुओं के पास धर्म श्रवण करने लगेगी। व्यन्तर देवों की उपासना का प्रचार होगा, धर्म म्लेच्छ खण्डों में रह जायेगा, ऋद्धिधारी मुनि नहीं होंगे, मिथ्या ब्राह्मणों का सत्कार होगा, अवधि व मन:पर्यय ज्ञान न होगा, तरुण अवस्था में ही मुनि पद में ठहरा जा सकेगा, मुनि एकल विहारी न होंगे, केवलज्ञान न होगा, प्रजा-चारित्र भ्रष्ट हो जायेगी, औषधियों के रस नष्ट हो जायेंगे। शिथिलाचारी साधु जिन भगवान का निर्मल शासन कलंकित करेंगे। जो भ्रष्टाचार और शिथिलाचार नष्ट करने में अपनी शक्ति लगाता है वहीं जैन समाज का सच्चा सेवक है। जब तक बाहरी पाखण्ड और मूढ़ता नष्ट नहीं होंगी, तब तक सम्यक्त्व की अभ्यन्तर प्रतीति की बातें बनाना महामूर्खता है। कषायें तभी मन्द हो सकती हैं, जब बाह्य पाखण्ड नष्ट हो जाये।

पंचम काल में कल्कियों व उपकल्कियों का प्रमाण : इस प्रकार 1000 वर्षों के बाद पृथक-पृथक एक-एक कल्की तथा 500 वर्षों के बाद एक-एक उपकल्की होता है—इस प्रकार 21 कल्की और इतने ही उपकल्की धर्म के द्रोह से एक सागरोपम आयु से युक्त होकर धम्मा पृथिवी (प्रथम नरक) में जन्म लेते हैं। इसके पश्चात् 3 वर्ष 8 मास और एक पक्ष के बीतने पर महा विषम, अति दुषमा छठाँ काल प्रविष्ट होता है।

अन्तिम कल्की के समय चतुर्संघ की स्थिति : उस समय वीरांगज नामक एक मुनि, सर्वश्री नामक आर्यिका तथा अग्निल, पंगुश्री नाम के श्रावक युगल श्रावक-श्राविका होंगे। अन्त में ये चारों जन चार प्रकार के

आहार और परिग्रह को मरणपर्यन्त छोड़कर संन्यास (समाधिमरण) को ग्रहण करते हैं।

प्रत्येक कल्की के काल में एक अवधिज्ञानी मुनि : प्रत्येक कल्की के प्रति एक-एक दुषमाकालवर्ती साधु को अवधि ज्ञान प्राप्त होता है और उसके समय तक चातुर्वर्ण्य संघ भी अल्प हो जाता है।

छठे काल में : छठे काल के अन्त में मनुष्य एक हाथ के लम्बे शरीर वाले होंगे और उनकी आयु बीस वर्ष होगी। उस काल के सब मनुष्य नरक और तिर्यंच योनि से ही मनुष्य पर्याय में जन्म धारण करेंगे और मरकर भी नरक व तिर्यंच गति में ही जायेंगे। शीत, क्षार, विष, वज्र, अग्नि, धूल और धूम्र इस प्रकार की सात तरह की सात-सात दिन तक भयंकर वर्षायें होंगी। इससे सारी पृथ्वी पर महान प्रलय हो जायेगा। एक-एक योजन तक पृथ्वी जल मग्न हो जायेगी। इस महाप्रलय में अनेकों जीव मर जायेंगे।

श्रावण कृष्ण प्रतिपदा से उत्सर्पिणी काल का प्रारम्भ होगा; तब आयु, काल, बल, बुद्धि आदि उत्तरोत्तर बढ़ते जायेंगे। यह काल अवसर्पिणी काल से उल्टा चलेगा।

इस उत्सर्पिणी काल के प्रारम्भ से 49 दिन तक सात तरह की जैसे—जल, दूध, घृत, अमृत, सुगन्धित पवन आदि की शुभ वर्षायें होंगी। उनसे सर्वत्र शान्ति स्थापित हो जायेगी। वह दिन भाद्रपद शुक्ल पंचमी का दिन होगा।

कालों का समय : विदेह क्षेत्र में हमेशा चतुर्थ काल रहता है। केवल भरत और ऐरावत क्षेत्रों में क्रम से निम्न प्रकार से काल परिवर्तन होता है—बीस कोड़ाकोड़ी सागर का एक कल्पकाल होता है। उसमें दस कोड़ाकोड़ी सागर का एक अवसर्पिणी काल और दस कोड़ाकोड़ी सागर का एक उत्सर्पिणी काल होता है। इन कालों में सुखमा सुखमा काल (पहला) चार कोड़ाकोड़ी सागर का, सुखमा काल (दूसरा) तीन कोड़ाकोड़ी सागर का, सुखमादुखमा काल (तीसरा) दो कोड़ाकोड़ी सागर का, दुखमासुखमा काल (चौथा) बयालीस हजार वर्ष कम एक

कोड़ाकोड़ी सागर का, दुखमा काल (पाँचवाँ) इक्कीस हजार वर्ष का और दुखमासुखमा काल (छठा) इक्कीस हजार वर्ष का होता है।

तीसरे सुखमादुखमा काल के अन्त में चौदह कुलकर होते हैं। चतुर्थ काल में तीर्थंकर, नारायण, प्रतिनारायण, चक्रवर्ती आदि त्रेसठ शलाका पुरुष उत्पन्न होते हैं। इस काल में मनुष्य मुनि बनकर कर्मों को क्षयकर मोक्ष भी जाते हैं।

इस समय अवसर्पिणी काल चल रहा है। छठे काल के पूरा होने पर उत्सर्पिणी काल प्रारम्भ होगा। उसमें पहले छठा, फिर पाँचवाँ, फिर चौथा काल आयेगा। तब सबसे प्रथम श्रेणिक राजा का जीव, जो कि इस समय चौरासी हजार वर्ष की आयु लेकर पहले नरक में दुःख भोग रहे हैं, वे पहले तीर्थंकर होंगे। उनका नाम **महापद्म** होगा और एक सौ सोलह वर्ष की उनकी आयु होगी। उनका शरीर सात हाथ का ऊँचा होगा। इसी प्रकार आयु, काय, बल यथाक्रम से बढ़ते चले जायेंगे।

सूर्य व चन्द्र ग्रहण के अर्थ में : राहू चन्द्रमा को आच्छादित करता है और केतु सूर्य को आच्छादित करता है, इसी का नाम सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहण है।

सराग वीतराग चारित्र निर्देश : वह चारित्र अन्य प्रकार से भी दो भेद रूप कहा जाता है—सराग व वीतराग। शुभोपयोगी साधु का व्रत, समिति, गुप्ति के विकल्पों रूप चारित्र सराग है और शुद्धोपयोगी साधु के वीतराग स्व-संवेदनरूप ज्ञाता दृष्टा भाव वीतराग चारित्र है।

स्याद्वाद : अनेकान्तमयी वस्तु का कथन करने की पद्धति स्याद्वाद है। किसी भी एक शब्द या वाक्य के द्वारा सारी की सारी वस्तु का युगपत् कथन करना अशक्य होने पर प्रयोजनवश कभी एक धर्म को मुख्य करके कथन करते हैं और कभी दूसरे को। मुख्य धर्म को सुनते हुए श्रोता को अन्य धर्म भी गौण रूप से स्वीकार होते रहें; उनका निषेध न होने पाये, इस प्रयोजन से अनेकान्तवादी अपने प्रत्येक वाक्य के साथ स्यात् या कथंचित् शब्द का प्रयोग करा है।

क्रमशः

प्रथमानुयोग

कवि परिचय

कविवर पं. जुगलकिशोरजी मुख्तार 'युगवीर'

साहित्य के पितामह किन्तु कृशकाय, आचार्य जुगलकिशोरजी मुख्तार युगवीर, श्रम और अध्यवसाय की जीवन्त मूर्ति थे। आपने दिल्ली में समन्तभद्राश्रम की स्थापना की, जिसे बाद में अपनी पूरी सम्पत्ति का ट्रस्ट बनाकर भारत विख्यात वीर सेवा मंदिर ट्रस्ट में परिवर्तित कर दिया।

राष्ट्रीय भावना आपमें इतनी अधिक थी कि प्रतिदिन सूत कात कर भोजन करते थे। दस वर्ष मुख्तारी करने के कारण मुख्तार विशेषण आपके नाम के साथ जुड़ गया। स्वाध्याय, वाङ्मय निर्माण, संशोधन, सम्पादन जैसी विभिन्न साहित्यिक प्रवृत्तियों और कविता, निबन्ध, भाष्य, शोध, संस्मरण, विस्तृत प्रस्तावनाएँ आदि विविध विधाओं में कोई एक व्यक्ति एक साथ भी पारंगत हो सकता है, इसके विरल उदाहरण थे मुख्तार साहब। आपने जैन इतिहास में अपने प्रकार का पहला ग्रंथ परीक्षा (दो भाग) लिखकर एक उद्भट समीक्षक के रूप में साहित्यिक जीवन का प्रारम्भ किया।

युगवीर जी की काव्य-जगत में स्थापना उनकी प्रसिद्ध रचना 'मेरी भावना' से हुई जिसका हिन्दी साहित्य में लघु पुस्तिका के रूप में बिक्री का अपना कीर्तिमान है। अंग्रेजी और अनेक भारतीय भाषाओं में अनुदित इस रचना के गायन से कई सार्वजनिक उत्सवों का प्रारम्भ होता रहा है। युगभारती युगवीरजी की कविताओं का एक मात्र प्रकाशित संग्रह है।

श्री युगवीर ने सामाजिक, राष्ट्रीय, आचारमूलक, भक्तिपरक और दार्शनिक विषयों पर अनेक अन्वेषणात्मक एवं समाजसुधारात्मक निबन्ध लिखे जो युगवीर निबंधावली (दो भागों) तथा जैन साहित्य और इतिहास पर विवाद प्रकाश नामक ग्रंथों में संकलित है। आचार्य समंतभद्र की कृतियों पर ग्रंथ लिखकर आपने एक समर्थ भाष्यकार के रूप प्रसिद्धि अर्जित की। आपने देवागम तत्वानुशासन युक्त्यनुशासन पुरातन जैन वाक्यसूची जैन ग्रंथ प्रशस्ति—संग्रह आदि अनेक ग्रंथों की विशद संपादकीय भूमिकाएँ लिखीं जो अध्येताओं के लिए अत्यंत उपयोगी है। अपने समय के सर्वश्रेष्ठ जैन पत्र अनेकांत के संपादक प्रकाशक युगवीरजी ही थे। आपने जैन गजट, जैन हितैषी जैसे विख्यात पत्रों का लम्बे समय तक संपादन कर एक प्रखर संपादक एवं पत्रकार के रूप में अपनी प्रतिभा का परिचय दिया।

"जिस प्रकार–उसी प्रकार" में छिपा रहस्य

जिस प्रकार– जहर को समझाने का उद्देश्य जहर को छुड़वाने के लिए है।

उसी प्रकार– अशुद्धनय, व्यवहारनय से समझाने का उद्देश्य उनको छोड़ने के लिए है, ना कि ग्रहण के लिए।

जिस प्रकार– जिनदेव निष्काम हैं।

उसी प्रकार– परमाणु अशब्द है अर्थात् उसमें स्कन्ध पर्यायरूप शब्द नहीं होता।

जिस प्रकार– सूर्य कभी जन्मता नहीं है और न मरता है।

उसी प्रकार– आत्मा कभी जन्म नहीं लेता और कभी मरता नहीं इसलिए अज है, चैतन्य सूर्य तो सदा प्रकाशमय है।

जिस प्रकार– सूर्योदय होते ही अंधकार मिट जाता है।

उसी प्रकार– चैतन्य सूर्य उदय होने पर विकार मर जाता है।

जिस प्रकार– किसी का प्रिय पुत्र खो गया हो उसके बदले पुलिस उसे पैसा दे तो किस काम का ? उसे तो मात्र पुत्र चाहिए।

उसी प्रकार– आत्म की प्रतीति (प्राप्ति) बिना रागादि परिणाम, स्वर्ग आदि किस काम के, धर्मी को तो मात्र मोक्ष चाहिए।

जिस प्रकार– बिछड़ी हुई लड़की को तो अपनी माँ चाहिए, न मिठाई, न खिलौना, न पैसा।

उसी प्रकार– बिछडी हुई ज्ञान, दर्शन आदि पर्यायों को तो मात्र अपनी आत्मा चाहिए, इज्जत, प्रशंसा आदि कुछ नहीं चाहिए।

जिस प्रकार– शौर्यवान के प्रताप से कायर पुरुष बिना संग्राम के ही मर जाते हैं। पद्मोत्तर राजा श्री कृष्ण से युद्ध करने आया, ज्यों ही श्री कृष्ण ने धनुष की टंकार की त्यों ही सेना बिना युद्ध किये ही भाग गई।

उसी प्रकार– मैं शुद्ध चिंदानंद स्वरूप हूँ ऐसा अनुभव होने पर मन के संकल्प–विकल्प पहले ही मर जाते है।

जिस प्रकार– द्वार चाहे जितना अच्छा हो फिर भी द्वार मकान में नहीं आता।

उसी प्रकार– राग जितना चाहे शुभ हो तब भी आत्मा के अन्तर में प्रविष्ट नहीं हो सकता।

जिस प्रकार– द्वारपाल राजा के साथ महल में जाता है परन्तु द्वारपाल कहीं राजा नहीं हो जाता ।

उसी प्रकार– मन द्वारा विवेक होता है परन्तु मन कहीं आत्मा नहीं है तथा आत्मा मन नहीं है।

क्रमशः संकलन – स्व० प्रो० पुरुषोत्तमकुमार जैन, रुड़की

समाचार-दर्शन

तीर्थधाम चिदायतन का भव्य पंचकल्याणक सम्पन्न

तीर्थधाम चिदायतन : पूज्य श्री कानजीस्वामी के प्रभावनायोग में हस्तिनापुर स्थित तीर्थधाम चिदायतन में श्री 1008 शान्तिनाथ जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महामहोत्सव अभूतपूर्व धर्मप्रभावना के साथ सम्पन्न हुआ।

श्री शान्तिनाथ-अकम्पन-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट द्वारा 01 दिसम्बर से 06 दिसम्बर, 2024 तक सम्पन्न हुआ। इस मांगलिक अनुष्ठान में प्रतिदिन गुरुदेवश्री के सी.डी प्रवचन के अतिरिक्त देशभर से आमंत्रित विशिष्ट विद्वानों के माध्यम से प्रतिदिन प्रवचन व कक्षाओं का लाभ मिला।

विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य ब्रालब्रह्मचारी पण्डित अभिनन्दनकुमार जैन, मंच संचालन पण्डित संजय शास्त्री (जेवर) कोटा; एवं निर्देशन पण्डित रजनीभाई दोशी, हिम्मतनगर के निर्देशन में सम्पन्न हुए।

इस महामहोत्सव में बालब्रह्मचारी हेमन्तभाई गाँधी, सोनगढ़; पण्डित राजेन्द्र जैन, जबलपुर; पण्डित देवेन्द्रकुमार जैन, बिजौलिया; पण्डित शुद्धात्मप्रकाश भारिल्ल, जयपुर; पण्डित नीतेशभाई, मुम्बई; पण्डित जे.पी. दोशी, मुम्बई; डॉ. मनीष जैन, मेरठ; डॉ. विवेक जैन, इन्दौर आदि विद्वानों ने अपने दिव्यज्ञान से साधर्मियों को तत्त्वज्ञान का लाभ प्रदान किया।

मङ्गलार्थी शालीन, ज्ञायक, समकित द्वारा वैराग्यमय जैन शासन की महाभारत और भगवान आदिनाथ विद्यानिकेतन के बच्चों द्वारा मुक्ति सोपानम् करणानुयोग के माध्यम से एक विशिष्ट प्रस्तुति की गई। सम्पूर्ण कार्यक्रम की बहुत-बहुत सराहना मंच एवं उपस्थित साधर्मी समूह ने की। इस अवसर पर श्रीमती स्वानुभूति भारिल्ल को आदरणीय पवन ताऊजी की स्मृति में सम्मानित किया गया।

प्रतिष्ठा महोत्सव का ध्वजारोहण श्री भानुकुमारजी कोटा परिवार द्वारा किया गया। प्रतिष्ठा मण्डप उद्घाटन श्री डॉ. किरीटभाई गोसलिया, यूएसए, और महामहोत्सव के माता-पिता श्री संजय जैन श्रीमती मंजू देवी जबलपुर ने सौभाग्यशाली पद प्राप्त किया। सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी श्री स्वप्निल जैन श्रीमती प्रिया जैन अलीगढ़। जिनकी भावनानुरूप यह महामहोत्सव सम्पूर्ण जैन समाज और मुमुक्षु समाज की एकजुटता का परिचय प्रदान कर रहा था, वहीं मुमुक्षु समाज की समस्त धार्मिक संस्थाओं को एक मंच पर उपस्थित होने का गौरव प्रदान कर रहा था।

इस अवसर पर सम्पूर्ण देश के साधर्मियों को पारस्परिक मिलन तो हुआ ही

तीर्थधाम चिदायतन में भविष्य में भी पूज्य गुरुदेवश्री द्वारा प्रवाहित आध्यात्मिक तत्त्वज्ञान का प्रचार-प्रसार इस भूमि से होगा।

सम्पूर्ण कार्यक्रम में श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट मुम्बई से श्री निमेषभाई शाह, हितेनभाई शाह परिवार मुम्बई, लन्दन से शीतल-विजेन शाह परिवार, बैंगलोर से रमेशजी चंपालालजी भण्डारी परिवार, इन्दौर से श्री विजयजी बड़जात्या, जयपुर से श्री परमात्मप्रकाश भारिल्ल, श्री शुद्धात्मप्रकाश भारिल्ल, श्री पारस पारेख, पूने सम्पूर्ण कार्यक्रम श्री अजितप्रसादजी जैन, दिल्ली की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ।

सम्पूर्ण देश और विदेश से इस संकुल के प्रति विशेष आकर्षण का भाव देखा गया और इस महामहोत्सव में हजारों की संख्या में साधर्मी भाई-बहिनों ने पधारकर कार्यक्रम में सहभागिता प्रदान की।●

फरवरी 2025 माह के मुख्य जैन तिथि-पर्व

2 फरवरी - माघ शुक्ल 4-5
श्री विमलनाथ जन्म-तप कल्याणक
दशलक्षण व्रत प्रारम्भ, बसंत पंचमी

3 फरवरी - माघ शुक्ल 6
श्री विमलनाथ ज्ञान कल्याणक

5 फरवरी - माघ शुक्ल 8 **अष्टमी**

6 फरवरी - माघ शुक्ल 9
श्री अजितनाथ तप कल्याणक

7 फरवरी - माघ शुक्ल 10
श्री अजितनाथ जन्म कल्याणक

8 फरवरी - माघ शुक्ल 11
पं. बनारसीदास जी जयन्ती

9 फरवरी - माघ शुक्ल 12
श्री अभिनंदननाथ जन्म तप कल्याणक

10 फरवरी - माघ शुक्ल 13
श्री धर्मनाथ जन्म-तप कल्याणक
रत्नत्रय व्रत प्रारम्भ

11 फरवरी - माघ शुक्ल 14 **चतुर्दशी**
दशलक्षण व्रत समापन

12 फरवरी - माघ शुक्ल 15 पूर्णिमा
रत्नत्रय व्रत पूर्ण

13 फरवरी - फाल्गुन कृष्ण 1
षोडशकारण व्रत पूर्ण

16 फरवरी - फाल्गुन कृष्ण 4
श्री पद्मप्रभ मोक्षकल्याणक

18 फरवरी - फाल्गुन कृष्ण 6
श्री सुपार्श्वनाथ ज्ञानकल्याणक

19 फरवरी - फाल्गुन कृष्ण 7
श्री सुपार्श्वनाथ मोक्षकल्याणक
श्री चंद्रप्रभ ज्ञानकल्याणक

21 फरवरी - फाल्गुन कृष्ण 8 **अष्टमी**

22 फरवरी - फाल्गुन कृष्ण 9
श्री पुष्पदंत गर्भकल्याणक

24 फरवरी - फाल्गुन कृष्ण 11
श्री श्रेयांसनाथ जन्म-तपकल्याणक
श्री आदिनाथ ज्ञानकल्याणक

25 फरवरी - फाल्गुन कृष्ण 12
श्री मुनिसुव्रतनाथ मोक्षकल्याणक

27 फरवरी - फाल्गुन कृष्ण 14
चतुर्दशी, अमावस
श्री वासुपूज्य जन्म-तपकल्याणक

तीर्थधाम चिदायतन की पंचकल्याणक की झलकियाँ

तीर्थधाम चिदायतन की पंचकल्याणक की झलकियाँ

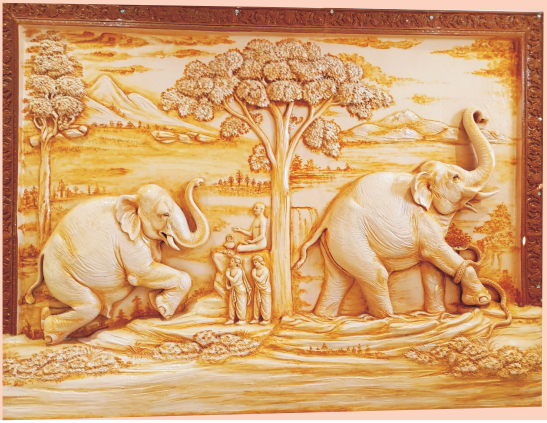

तीर्थधाम चिदायतन की पंचकल्याणक की झलकियाँ

तीर्थधाम चिदायतन की पंचकल्याणक की झलकियाँ

तीर्थधाम चिदायतन की पंचकल्याणक की झलकियाँ

तीर्थधाम चिदायतन की पंचकल्याणक की झलकियाँ

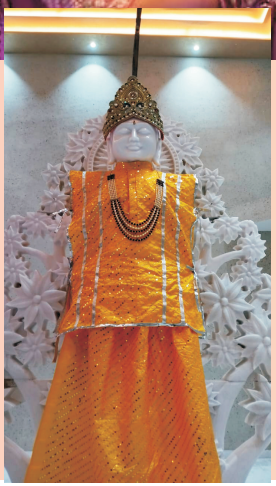

गणधरों के द्वारा नमस्कार योग्य मुनिदशा

अहो! मुनिदशा कैसी होती है? इसका भी लोगों को भान नहीं है। गणधरदेव भी जब नमस्कार-मन्त्र बोलते हैं, **तब 'णमो लोए सव्व साहूणं' - इस पद के द्वारा, गणधर भगवान का नमस्कार सब मुनियों के चरणों में पहुँचता है, तो यह मुनिदशा कैसी होगी? तीन लोक के नाथ भगवान महावीर, सीमन्धर आदि अनन्त तीर्थङ्करों के धर्मवजीर, ऐसे गणधर जब शुभराग के समय नमस्कार मन्त्र बोलते हैं, तब उसमें साधु के चरणों में भी नमस्कार आ जाता है। अहा! गणधरदेव भी जिसे नमस्कार करें, वह पद कैसा होगा?**

गणधरों में दो घड़ी में द्वादशाङ्ग की रचना करने की ताकत है - ऐसी सामर्थ्य भले अन्य मुनिवरों में न हो तो भी जिन्होंने मात्र दो घड़ी पहले आठ वर्ष की उम्र में साधु होकर आत्मा में लीनतारूप चारित्रदशा प्रगट की है - ऐसे मुनिवरों को भी गणधरदेव का नमस्कार हो जाता है। आठ वर्ष का राजकुमार अभी-अभी मुनि हुआ हो और गणधर लाखों वर्ष पहले मुनि हुए हों तो भी वे कहते हैं— **'सर्व सन्त मुनियों के चरणों में नमस्कार हो।'** इसमें आठ वर्ष की उम्र में साधु होनेवाले राजकुमार भी आ जाते हैं। **गणधरदेव कहते हैं कि जिसमें हमारा नमस्कार झेलने की ताकत हो - ऐसे सन्तों को हम साधु कहते हैं, उन सन्तों का चारित्र आनन्दमय है, वे सन्त दुःखी नहीं हैं।**

(- महा-महोत्सव प्रवचन)

Regn. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2024-26

स्वर्णिम अवसर—

भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन में प्रवेश हेतु

तीर्थधाम मङ्गलायतन द्वारा संचालित भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन के आगामी सत्र में अंग्रेजी माध्यम से कक्षा सातवीं पास कर चुके विद्यार्थियों के लिए कक्षा आठवीं के लिए सुनहरा अवसर है जो भी छात्र यहाँ के सुरम्य वातावरण में उच्चस्तरीय लौकिक शिक्षा के साथ-साथ धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा का भी लाभ प्राप्त करना चाहते हैं, वे हमारे कार्यालय अथवा वेबसाइट से प्रवेश आवेदन-पत्र मंगाकर अपेक्षित जानकारियों एवं प्रपत्रों के साथ भरकर भेज देवें।

विदित हो कि कम से कम 60 प्रतिशत या उससे अधिक अंक प्राप्त विद्यार्थी ही आवेदन योग्य हैं, स्थान सीमित हैं। अत: शीघ्र ही पूर्ण जानकारी प्राप्त कर आवेदन-पत्र भेजने का अनुरोध है। अन्तिम तिथि - 28 फरवरी 2025।

प्रवेश शिविर - 26 मार्च 2025 से 29 मार्च 2025 तक

तीर्थधाम मङ्गलायतन (प्रवेश फार्म, भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन)
C/o विमलांचल, हरिनगर, गोपालपुरी, अलीगढ़ (उ.प्र.) 202001
सम्पर्क सूत्र-9756633800 (पं. सुधीर शास्त्री); समकित जैन 8279559830 (उपप्राचार्य)
info@mangalayatan.com; www.mangalayatan.com

पं. सं. : DELBIL/2001/4685
स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक स्वप्निल जैन द्वारा **मङ्गलायतन** मुद्रणालय, आगरा रोड, अलीगढ़-202001 छपवाकर, 'विमलांचल', हरिनगर, अलीगढ़-202001 से प्रकाशित। **सम्पादक** : डॉ. जयन्तीलाल जैन,मङ्गलायतन वि०वि०

If undelivered please return to -

मङ्गलायतन
श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, हरिनगर, आगरारोड, अलीगढ़-202001 (उ.प्र.)
Shri Adinath-Kundkund-Kahan Digamber Jain Trust
Harinagar, Agra Road, Aligarh-202001 (U.P.)
Ph. : 9997996346, 2410010/10; Fax : 2410019/22
info@mangalayatan.com www.mangalayatan.com